LMI 2382 RC 2016
अनामिका सिंह
शोधा छात्र, समाजशास्त्र विभाग, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी।

जननी सुरक्षा योजना के क्रियान्वयन एवं स़्ालता का एक समाजवैज्ञानिक विश्लेषण

एक राष्ट्र के नागरिकों का स्वस्थ्य होना इसके आर्थिक विकास, समृ) और स्थायित्व के लिए बेहद जरूरी है क्यों कि स्वस्थ्य और सामर्थ्य जनसमुदाय ही अच्छी उत्पादकता में सहयोग करता है, जिसके परिणाम स्वरूप समावेशी विकास सम्भव हो पाता है। भारत में स्वास्थ्य सेवाओं की सुलभता बेहद संवेदनशील मुद्दा है। स्वाधीनता के बाद से ही देश के सभी नागरिकों को उत्तम स्वास्थ्य देने के लिए बहुत सारी योजनाएं चलायी जा चुकी हैं, परिणाम स्वरूप शहरों में तो बड़े- बड़े अस्पताल आदि बने पर भारतीय गाँवों तक इन पहुच बहुत कम ही बन पायी। ि़र भी इन प्रयायों ने अपार स़्ालता पायी। आज देश में प्लेग, चेचक, पोलियो जैसी महामारियां न के बराबर हो चली हैं। शिशु स्वास्थ्य देखभाल के कारण देश में शिशु मृत्युदर लगातार घटती जा रही है। जननी सुरक्षा योजना के तहत मदर एण्ड चाइल्ड ट्रैकिंग सिस्टम के द्वारा माता और शिशु दोनों को सुरक्षित जीवन की सौगात दी जा रही है। प्रस्तुत लेख में इस योजना के क्रियान्वयन, सहभागिता, उपलब्धाता, उद्देश्य एवं स़्ालता की विस्तृत विश्लेषण किया जायेगा।

LMI Not Mentioned RC 2019
दीपशिखा पटेल
शोधा छात्र, समाजशास्त्र विभाग, बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी।

मलिन बस्तियों के सामाजिक संरचना में वर्तमान परिवर्तन

शहरी क्षेत्रें में मलिन बस्तियों का विकास एक जटिल समस्या बन चुका है। ये बस्तियां औद्योगिक क्षेत्रें, रेलवे लाइनों, बंदरगाहों, नदी-तटों इत्यादि के आस-पास निरन्तर विकसित होती जा रही है। इनके घर कच्चे ईंट, मिट्टी, टिनशेड इत्यादि के बने होते हैं, इनका खाना, सोना, नहाना तथा शौच प्राय: खुले स्थानों में ही होता है। नालियाँ एवं समुचित अपवाह तंत्र के अभाव के कारण में अनेक जलजनित बीमारियों से ग्रसित होते हैं। ये प्राय: अशिक्षित एवं छोटे रोजगार कार्यों के द्वारा अपना जीवन यापन करते हैं। इस बात की पुष्टि बनारस की कुछ मलिन बस्तियों का अधययन करने के बाद हुई। 2011 की जनगणना में मलिन बस्ती जनसंख्या में सर्वाधािक प्रतिशत भागीदारी महाराष्ट्र (18ण्1:) एवं सबसे कम बिहार (1ण्9:) है। सरकार द्वारा इन बस्ती वासियों के जीवन स्तर में सुधाार लाने हेतु विभिन्न योजनाएँ संचालित की जा रही है। जैसे- राष्ट्रीय शहरी आवास एवं निवास नीति, 2007- इस योजना का मुख्य लक्ष्य निम्न श्रेणी के लिए वहन योग्य आवास का निर्माण करना है। राष्ट्रीय शहरी परिवहन नीति-2006, राष्ट्रीय शहरी स्वच्छता नीति-2008 इत्यादि और भी

अनेक योजनाएँ हैं, जिसके द्वारा सरकार मलिन बस्तीवासियों के सामाजिक, आर्थिक ढांचे को बदलने का प्रयास कर रही है, जिससे इनके जीवन स्तर में सुधाार हो सके।

LMI Not Mentioned RC 2017
ज्योति पटेल
शोधा छात्र, समाजशास्त्र विभाग, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी

विकास कार्यक्रमों की सफ़लता में जन-सहभागिता की भूमिका

ग्रामीण विकास योजनाओं की सफ़लता पर ही वास्तविक प्रगति निर्भर करती हैं। योजनाओं के सफ़ल क्रियान्वयन हेतु अनेक महत्वपूर्ण प्रयास करने के बावजूद वांछित सफ़लता प्राप्त न की जा सकी। इकबाल नरायन (1987) ने इस तथ्य को स्वीकार किया हैं कि भारत में विकास-कार्यक्रमों के सफ़ल क्रियान्वयन में सबसे बड़ी बाधाा वांछित स्तर तक जनता की सहभागिता सुनिश्चित न हो पाना है। उन्होंने जन-सहभागिता को विकास-कार्यक्रमों का मेरूदण्ड स्वीकार किया हैं। यतीश मिश्रा (1994) के अनुसार, किसी भी योजना में अनुकूलतम परिणाम प्राप्त करने में लोगों की समर्पित भावना एवं सहभागिता की प्रमुख भूमिका होती है। जनतंत्रीय ग्रामीण व्यवस्था में सहभागिता एक सामान्य ग्रामवासी को भी अपने विचार देने एवं अपने प्रयासों को दिखाने का अवसर प्रदान करता है कि वह भी विकास-कार्यक्रमों के नियोजन, संगठन, क्रियान्वयन एवं मूल्यांकन के उत्तरदायित्व निर्वाह के योग्य हैं। जन सहभागिता को सुनिश्चित करना ही नियोजन का प्रमुख उद्देश्य है जिससे उपयुक्त तथा स्थानीय आवश्यकताओं के अनुरूप विकास हो सकें। विकेन्द्रीकरण की अवधाारणा तभी अर्थपूर्ण हो सकती हैं जब नियोजन निम्नतम स्तर पर सहभागिता को स्वीकार करे तथा लोगों को अपने उत्तरदायित्व का अनुभव करने के योग्य बनाए। जो विचार तथा सुझाव सामान्य व्यक्तियों से प्राप्त होते हैं वे अनुभव एवं आवश्यकता-आधाारित होते हैं और इसी से नियोजकों के लिए अधािक व्यावहारिक व महत्वपूर्ण सि) हो सकते हैं, जिससे वे विकास की अधािक उपयुक्त व्यूह रचना तैयार कर सकें। विकास-कार्यक्रमों में जन-सहभागिता के उपर्युक्त महत्व को दृष्टिगत रखते हुए ही संयुक्त राष्ट्र की आर्थिक एवं सामाजिक परिषद ने अपनी संस्तुति में कहा है कि सरकार को राष्ट्रीय विकास की व्यूह रचना में सहभागिता को एक आधाारभूत नीति स्वीकार करना चाहिए तथा सभी व्यक्तियों, नागरिकों एवं अशासकीय संगठनों को लक्ष्य एवं नीतियों के निर्धारण तथा योजनाओं के क्रियान्वयन में अधािकतम सम्भव सक्रिय सहभागिता हेतु प्रोत्साहित करना चाहिए। सम्भवतः इसीलिए भारत की आठवीं पंचवर्षीय योजना (1992-97) में विकास को एक जन-आन्दोंलन बनाना आवश्यक समझा गया हैं। विकास की सम्पूर्ण प्रक्रिया में जनता की पहल तथा भागीदारी प्रमुख तत्व होने चाहिए।

LMI 3621 RC 2018
डॉ कौशल किशोर
सहायक प्राध्यापक, अनुग्रह नारायण सिंह समाज अध्ययन संस्थान, पटना।

बिहार के शैक्षिक उन्नयन में शिक्षा प्रोत्साहन कार्यक्रमों की भूमिका: उपलब्धियाँ एवं चुनौतियाँ

देश के सर्वाधिक पिछड़े एवं न्यूनतम साक्षरता दर वाले राज्य ''बिहार'' में निरक्षरता को दूर करने एवं गुणवत्तापूर्ण शिक्षा के विकास हेतु सरकार द्वारा अनेक प्रकार के प्रयास किये जा रहे हैं, जिनमें विद्यालयों की स्थापना, उसके विकास एवं विस्तार से लेकर योग्य शिक्षकों की नियुक्ति तो की ही जा रही है, साथ ही, छात्र-छात्राओं के नामांकन को बढ़ाने एवं छीजन को रोकने हेतु अनेक शैक्षिक प्रोत्साहन कार्यक्रमों का संचालन किया जा रहा है। इन प्रोत्साहन कार्यक्रमों में कुछ केन्द्र सरकार द्वारा प्रायोजित हैं तो कुछ बिहार सरकार द्वारा। ये प्रोत्साहन योजनायें विविध सामाजिक एवं शैक्षिक वर्ग के विद्यार्थियों के लिए अलग-अलग प्रकार के हैं जिसमें पोशाक, छात्रवृत्ति एवं सायकिल आदि योजनायें प्रमुख हैं। आरम्भ में इनकी शुरूआत पिछड़े वर्ग एवं बालिकाओं के लिए किया गया था, आगे चलकर इसके अन्तर्गत सभी वर्ग के विद्यार्थियों को आच्छादित किया गया। इन शैक्षणिक प्रोत्साहन कार्यक्रमों के फलस्वरूप जहाँ एक ओर शिक्षा के प्रति छात्र-छात्राओं एवं अभिभावकों की अभिरूचि बढी वहीं दूसरी ओर शिक्षकों की गैर-शैक्षणिक कार्यों में संलग्नता के कारण शिक्षा की गुणवत्ता में ह्रास भी हुआ। आज सरकारी एवं वित्त-पोषित विद्यालयों में छात्र-छात्राओं के नामांकन-दर में अभूतपूर्व वृद्धि हुई तथा छीजन दर (Drop-out) में गिरावट भी आयी है। शैक्षिक प्रोत्साहन कार्यक्रमों (मध्याहन् भोजन, साइकिल, पोशाक एवं छात्रवृत्ति आदि) के वितरण हेतु इनके पंजिका एवं अभिलेखों के प्रबंधन व रख-रखाव में शिक्षकों का अधिकांश समय जाया करता है। इन कार्यक्रमों हेतु प्राप्त होने वाली धन राशियों के कारण विद्यालयों में नामांकन दर में अभूतपूर्व (100 प्रतिशत से भी अधिक की) वृद्धि हुई है जो कार्यक्रम के अन्य पहलुओं पर भी ध्यानाकर्षित कराता है। इसके अन्तर्गत विद्यार्थियों का एक से अधिक विद्यालयों में नामांकन के अतिरिक्त, एक ही विद्यालय की एकाधिक कक्षाओं में उनके नामांकन को देखा गया है। विद्यालयों में छात्रों को बहुधा किसी एक ही योजना का लाभ दिया जाता है जबकि सरकार से एकाधिक योजनाओं की राशि विद्यालयों को प्राप्त होती है। अत: शेष (अन्य) योजनाओं की राशि विद्यालय प्रबंधन की कमाई का एक अच्छा स्रोत हो गया है। इस प्रकार इन कार्यक्रमों के क्रियान्वयन की व्यवस्थात्मक कमियों ने कई प्रकार की विसंगतियों को पैदा किया है जो प्रस्तावित अध्ययन के विश्लेषण का मुख्य केन्द्र है।

LMI 2376 RC 2016

कुशकुल दीप
शोधा छात्र, ।माजशास्त्र विभाग, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी

उत्तर आधुनिकता और भारतीय विधावाएं : एक समाजवैज्ञानिक विश्लेषण

एक तरु जहां भारत को प्राचीन समय से सद्‌गुण पर आधाारित आधयात्मिक राष्ट्र माना जाता है जिसमें विभिन्न बहुमुखी परम्पराओं, संस्कृतियों, स्वतंत्रा, समानता व न्याय की भावना का समावेशन है। वही दूसरी तरु रूढ़िवादिता व संकीर्णता से जकड़ी मानसिकता के कारण विधावा महिलाओं की स्थिति को लेकर सती प्रथा और वैधाव्य जैसी कुप्रथाएं समाज में विद्यमान थी। समाज सदैव परिवर्तनशील रहा है। भारतीय समाज भी इस परिवर्तन से अछूता नहीं रहा है। उत्तर आधुनिकता के इस दौर में दुनियां ने जहां सूचना और संचार क्रांतियों के माधयम से पूरे विश्व को एक गांव सरिखे बना दिया, वहीं नगरीकरण, औद्योगीकरण एवं पश्चिमीकरण ने व्यक्ति की सोच व समाज के स्वरूप को परिवर्तित कर दिया। ऐसे समय में विधावाओं से जुड़ी परम्पराओं, मान्यताओं, कर्मकाण्ड, सभ्यता, संस्कृति व मूल्यों इत्यादि में सकारात्मक परिवर्तन के स्वरुप को देखा जा सकता है। प्रस्तुत लेख वाराणसी नगर में निवासित विधावाओं के अधययन पर आधाारित होगा। जिसमें आधाुनिकता के दौर में उनके सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक मिथकों से निर्मित क्रियाकलापों एवं वर्तमान समय की चुनौतियों का वस्तुनिष्ठ विश्लेषण किया जायेगा।

LMI–3381 RC 2016

डॉ. ममता गावसिन्धो
विभागाधयक्ष समाजशास्त्र / समाजकार्य,सैफिया कलॉ एवं वाणिज्य महाविद्यालय,कोएफिजा, भोपाल (म.प्र.)

कोरकू जनजाति समूह में प्रतीकवाद में परिवर्तन: एक समाजशास्त्रीय अधययन

जनजातीय समुह में कोरकू जनजाति का भी एक बड़ा वर्ग है। मधयप्रदेश के अंतर्गत होशंगाबाद, हरदा, देवास में निवासरत 300 कोरकू जनजाति समूह में प्रतीकवाद को जानने हेतु शोद्य अधययन में शामिल किया गया है। अधययन के अंतर्गत समाजशास्त्रीय प्रविधाियों जिनमें अवलोकन निर्दशन समुह चर्चा, वैयतिक अधययन द्वारा प्राथमिक द्वितीयक तथ्यों का संग्रह कर शोद्य प्रतिवेदन प्रस्तावित है।

संसार की उन्नत संस्कृतियों की भांति जनजातीय संस्कृति के संदर्भ में प्रतीकवाद की अपनी प्रासंगिकता है। इन्हीं प्रतीको द्वारा सामाजिक व्यवहार अंत: क्रियाऐं सामाजिक स्थितियों को जाना जाता है, प्रस्तावित अधययन कोरकू जनजातीय समूह का आधाार होगा। इन्ही प्रतीको द्वारा सामाजिक जीवन का ताना–बाना समूह को अनुशासित रखता हैं एव उसका पालन करवाता है। जिससे यह समूह की संस्कृतियॉ एवं उनका अस्तित्व कायम रहता हैं तथा पीढ़ी दर पीढ़ी हस्तांतरित होता हैं जो युवा पीढ़ी का मार्गदर्शक ही नही वरन समाजीकरण मे उनकी

सामाजिक सांस्कृतिकता का धारोहर एवं अनुभव का प्रतिल हैं। कोरकू जनजाति आष्ट्रिक परिवार से है। इन समूह में प्रतीकवाद की अवधारणा संबंधी अधयन नवीन है। प्रतीकवाद में प्रतीकों के अर्थ महत्वपूर्ण होते हैं उनसे ही सामाजिक जीवन में सदस्यों की भागीदारी सुनिश्चित रहती हैं। अतः यह अधययन सूक्ष्म अधययन की श्रेणी में रखा जा सकता है। इसी आधार पर शोधा अधययन निम्न उद्देश्यो पर आधारित है:- कोरकू जनजाति समूह का परिचय एवं उनकी स्थिति को स्पष्ट करना। जनसंख्यात्मक स्थिति में जीवनशैली में प्रतीकवाद को संस्कृति, मान्यताओं, त्योहार उत्सव, संस्कार, गौत्र, लोकनृत्य, लोककालाएं में प्रतीक को स्पष्ट करना, इत्यादि आधार पर शोद्य प्रतिवेदन का प्रस्तुतीकरण किया जाएगा।

LMI -3639 RC Applied
मनोज कुमार
शोधा छात्र, समाजशास्त्र विभाग काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी, उत्तरप्रदेश

समाजिक गतिशीलता एवं विकास

विकास परिवर्तन की एक प्रक्रिया है जिसके द्वारा एक देश के अधिकाधिक नागरिक उच्च भौतिक रहन-सहन के स्तर, स्वास्थ्य एवं दीर्घ जीवन प्राप्त करने के साथ-साथ अधिकाधिक मात्र में शिक्षित होने का प्रयास करते है। दूसरे शब्दों में, सामाजिक जीवन में गुणात्मक सुधार तथा मानवीय आवश्यकताओं की पूर्ति को सामाजिक विकास कहतें है। व्यापक अर्थो में, वांछित लक्ष्यों की ओर बढ़नें का नाम ही विकास है। यह कहना अतिशयोक्ति नही होगी कि आज देश में जो सामाजिक बदलाव दिख रहा है। हम यदि आज से सौ वर्ष पहले की स्थिति को स्मरण करें तो धयान में आता है कि समाज में छूआ-छूत अशिक्षा लड़कियों के प्रति भेदभाव जैसी अनेक बुराईयां व्याप्त थी बाल विवाह और उसके कारण विधावाओं की समस्या, दहेज प्रथा और उसके कारण बहुओं को जलाया जाना, बधुआ मजदूरी आदि अनेक सामाजिक रूढ़िया समाज का अभिशाप बनी हुई थी। संविधान की प्रस्तावना और अनेक कानूनी प्रावधानों के द्वारा कुप्रथाओं को दूर करने का प्रयास किया गया और धीरे-धीरे इन्हें पूरी तरह से तो नही मिटाया जा सका लेकिन इन पर कफी हद तक काबू पाया गया है। वैसे तो आज भी छूआ-छूत, दहेज प्रथा, बाल विवाह आदि की खबरें सुनने को मिल जाती है। लेकिन इनकी व्यापकता कफी कम है और कानून की डर से ऐसी घटनाऐं सामने कम आती है।

LMI 2402 RC 2017
मिन्टू कुमार गौतम
शोधा छात्र, समाजशास्त्र विभाग, का0हि0वि0वि0, वाराणसी।

उच्च शिक्षारत् अनुसूचित जाति के छात्रें की समस्याएँ एवं शैक्षणिक महत्वकांक्षाएँ : एक समाजशास्त्रीय अधययन

शिक्षा एक ऐसा सशक्त साधान है जिसके माधयम से जीवन के समस्त भौतिक साधानों को बड़ी सुगमता एवं प्रभावकारी ढंग से प्राप्त की जा सकती है लेकिन यह तभी सम्भव होगा जब वर्तमान विद्यालयों ओर महाविद्यालयों मे दी जाने वाली शिक्षा के स्थान पर सुशिक्षा हो। आज उच्चतर शिक्षा की ओर दलित समुदाय भी आगे बढ़ रही है। लेकिन सरकार को चाहिए कि इतनी शिक्षा का अनुपात बढ़ाने के लिए कुछ नियमें बनाया जाये, और नियमों को प्रभावी ढंग से लागू किया जासके ताकि उनका समुचित लाभ उच्च शिक्षारत् दलित छात्र-छात्रओं को मिल सके ताकि अनेक सामाजिक आर्थिक स्थिती में सुधाार हो सके। क्योंकि आये दिन उच्चशिक्षारत् अनुसूचित जाति के छात्र-छात्रओं के सामने अनेक समस्यायें सामने उभर कर आती है जैसे- अनुसूचित जाति के छात्रें के सामने उच्च शिक्षा में सामंजस्य बैठाने की समस्या, अंग्रेजी भाषा की समस्या, आर्थिक समस्या, छात्रवास की समस्या, अधिाकतर जातियों के शिक्षकों द्वारा परीक्षा के आन्तरिक एवं बाह्य मूल्यांकन में भेदभाव करना, शोधा में प्रवेश के समय जातिगत भेदभाव की समस्या।

LMI- 2383 RC 2018
नागेश कुमार चौबे
शोधा-छात्र ,समाजशास्त्र विभाग, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय

ग्रामीण विकास में सांसद निधिा का योगदान

प्रधाानमंत्रे नरेंद्र मोदी ने सांसदों को इस बात के लिए प्रेरित किया कि वे सांसद स्थानीय क्षेत्र विकास निधिा को ग्रामीण विकास योजनाओं के लिए खर्च करें। निश्चित ही हमारे सांसदों को चाहिए कि वे इस सुझाव को हाथो-हाथ लें, क्योंकि इससे उन्हें सांसद निधिा को एक ऐसे काम में लगाने का मौका मिलेगा जिससे ग्रामीण जनजीवन और उनकी अपेक्षाओं को बेहतर रूप में पूरा किया जा सकेगा । सांसद विकास निधिा की शुरुआत के पीछे उद्देश्य यही था कि सांसद स्थानीय विकास में योगदान दे सकें। इसके तहत दी जाने वाली राशि साल दर साल बढ़ती रही जो 800 करोड़ रुपये प्रति वर्ष से बढ़कर आज 4000 करोड़ रुपये तक पहुंच चुकी है। इस राशि के उपयोग-दुरुपयोग को देखते हुए यह स्वाभाविक ही था कि जनता इस राशि के वास्तविक, उत्पादक और पारदर्शी खर्च की मांग करती। आलोचक इस योजना की निंदा करते आए हैं, क्योंकि इसके तहत अव्यवस्थित रूप से धान खर्च किया जाता है। वास्तव में सांसद विकास निधिा का सांसदों के लिए विशेष महत्व है, क्योंकि

इसके माधयम से वे अपने चुनाव क्षेत्र के लिए कुछ करने की स्थिति में होते हैं। जो भी हो इसके पक्ष में तमाम तर्क गिनाने के बावजूद वषरें से इसके दुरुपयोग की घटनाएं सामने आती रही हैं।

प्रधाानमंत्री मोदी की सांसद आदर्श ग्राम योजना के माधयम से सांसदों को एक बेहतरीन मौका मिला है कि वे अपने क्षेत्र के कुछ एक गांवों को आदर्श गांव के तौर पर विकसित करें और इन्हें अच्छे दिन हेतु उदाहरण के तौर पर पेश करें। ऐसा होने पर दूसरे गांवों को भी अपनी बेहतरी का इंतजार रहेगा और इस तरह सांसद विकास निधिा का सही इस्तेमाल सुनिश्चित होगा। इससे सांसद विकास निधिा को लेकर आम जनमानस के मन-मस्तिष्क में व्याप्त शंकाओं का समाधाान किया जा सकेगा और सांसद भी सार्वजनिक जीवन में अपनी प्रतिष्ठा कायम कर सकेंगे। सांसद विकास निधिा भारतीय मेधाा का एक बेहतरीन उदाहरण है। स्वतंत्रा दिवस भाषण में प्रधाानमंत्री ने सांसद आदर्श ग्राम योजना की घोषणा की और इस योजना की औपचारिक शुरुआत के लिए जयप्रकाश नारायण के जन्मदिन का चुनाव किया। इस योजना का उद्देश्य चुने हुए गांवों में आधाारभूत सुविधााओं का सुधाार करना है और लोगों के जीवनस्तर में चहुंमुखी सुधाार सुनिश्चित किया जाना है। योजना के दिशानिर्देशों के मुताबिक प्रत्येक सांसद एक गांव का चुनाव कर सकेगा जिसे 2016 तक मॉडल गांव के तौर पर विकसित किया जाना है। इसी तरह दो और गांवों का विकास 2019 तक करना है। 2019 से 2024 के बीच पांच गांवों का विकास किया जाना है। इसके लिए यह भी शर्त है कि चुने हुए गांव से सांसद के परिवार का कोई रिश्ता नहीं होना चाहिए। यह आदर्श ग्राम न केवल भौतिक रूप से बुनियादी ढांचे के मामले में मॉडल गांव बनेगा, बल्कि सामाजिक न्याय, स्वच्छता, लैंगिक समानता के साथ-साथ स्थानीय स्वशासन के मामले में भी पूर्ण रूप से पारदर्शी और जवाबदेह होगा। सरकार को उम्मीद है कि इसका देशव्यापी प्रभाव होगा और जिला प्रशासन तथा बाकी जनप्रतिनिधिायों को भी इसी तरह का कार्य करने की प्रेरणा मिलेगी। इसके लिए सांसदों को अपने क्षेत्रें में इसकी शुरुआत करनी होगी। मोदी के मुताबिक दूसरी अन्य योजनाओं की तरह यह योजना लाभार्थियों को प्राप्तकर्ता और सरकार को मुख्यकर्ता के रूप में नहीं देखती। इस योजना का उद्देश्य ग्रामीणों को सशक्त करना है तथा उन्हें अवसर मुहैया कराना है ताकि वे इनका सही इस्तेमाल कर सकें। यह योजना एक नई दिशा देती है और मैं आश्वस्त हूं कि कठिन परिश्रम और उद्यमी कौशल के चलते ईमानदार ग्रामीण अपने विकास के रास्ते का निर्माण स्वयं कर सकेंगे। कुछ वर्ष पहले संप्रग सरकार द्वारा शुरू की गई प्रधाानमंत्री आदर्श ग्राम योजना से काफी अलग है। मोदी की योजना के तहत विकास कायरें की समीक्षा का काम मुख्य भागीदारों के हाथ में होगा, जो स्थानीय सांसद होंगे। इस तरह संबंधित सांसद का राजनीतिक भविष्य इस बात पर निर्भर करेगा कि कितनी अच्छी तरह से योजना का क्रियान्वयन हुआ। इससे अन्य सांसदों के बीच भी प्रतियोगिता शुरू हो जाएगी, क्योंकि पड़ोसी चुनाव क्षेत्रें की जनता इस बारे में विचार साझा करेगी। प्रधाानमंत्री पहले ही कह चुके हैं कि यह रुपया-पैसा योजना नहीं, बल्कि मांग आधाारित जनभागीदारी योजना है। भारत में 790 सांसद हैं और यदि सभी इसमें भाग लेते हैं तो आगामी तीन वषरें में 2400 मॉडल गांवों का विकास होगा। देश में छह लाख से अधिाक गांव हैं। जाहिर है कि यह एक मुश्किल काम है, लेकिन इस अंतराल को विधाायक विकास निधिा से विधाायक आदर्श ग्राम योजना के माधयम से पूरा किया जा सकता है। इसमें कारपोरेट वर्ग भी अपनी भूमिका निभा सकता है। इस संदर्भ में काफी संभावनाएं हैं, लेकिन सवाल यही है कि क्या हमारे सांसद ग्रामीण भारत के बदलाव को दिशा देंगे जो आजादी के बाद से ही विकास की राह देख रहे हैं।

LM Ordinary Membership ID : 29 RC 2016
प्रशांत कुमार
शोधा छात्र, अनुग्रह नारायण सिंह समाज अध्ययन संस्थान, पटना

पैतृक भू-सम्पदा पर महिलाओं का अधिकार : मान्यता एवं चुनौतियाँ

20वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में रेडिकल सोशियोलॉजी की स्थापना एवं नारीवादी चिंतन की प्रक्रिया के अंतर्गत समानतावादी परिप्रेक्ष्य तथा महिलाओं के अधिकारों को लेकर जो विमर्श की परम्परा आरंभ हुई, उसकी एक कड़ी के रूप में 'हिन्दू अधिकार (संशोधन) अधिनियम', 2005 को देखा जा सकता है। यह अधिनियम हिन्दू महिलाओं के उनकी पैतृक सम्पत्ति के उत्तराधिकार में समान अधिकार प्रदान करता है। यदि वैश्विक स्तर पर देखा जाए तो दो-तिहाई कार्य महिलाओं द्वारा किया जाता है, खाद्य उत्पादकता में इनका योगदान 50 प्रतिशत है, आय सहभागिता में 10 प्रतिशत है जबकि वैश्विक सम्पदा में हिस्सेदारी 1 प्रतिशत से भी कम है। इसी प्रकार यदि बिहार के सन्दर्भ में देखा जाए तो ग्रामीण महिलाओं की 35 प्रतिशत आबादी कृषि कार्य में संलग्न हैं, जिसमें मात्र 13 प्रतिशत महिलाओं के नाम पर कुछ-न-कुछ जमीन है जबकि मात्र 7 प्रतिशत महिलायें हीं भूमि सम्बन्धित अधिकारों से अवगत हैं। उपर्युक्त तथ्य एवं आंकड़े महिलाओं की वास्तिविक एवं विरोधाभासी स्थिति को दर्शाते हैं क्योंकि उक्त अधिनियम के संशोधन के एक दशक के बाद भी भारतीय महिलायें विशेषकर बिहार की हिन्दू महिलायें पैतृक सम्पत्ति में अपने अधिकार को लेकर सजग नहीं हैं। अतः प्रस्तुत शोध प्रपत्र में यह जानने का प्रयास किया गया है कि इस अधिनियम के संशोधन 10 वर्षों के पश्चात् हिन्दू महिलाओं द्वारा अपने अधिकारों के प्रयोग करने की स्थिति क्या है? क्या इससे उनकी सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक दशाओं में सुधार हुआ है यदि नहीं तो उनके अधिकारों से वंचित रहने के कारण क्या हैं? इसकी विस्तृत व्याख्या शोध प्रपत्र में करने का प्रयास किया गया है।

LMI 2453 2018
प्रियंका सोनकर

भारत में नगरीय सभ्यता का उद्‌भव व विकास

वैश्विक धारातल पर भारत की पहचान एक धाार्मिक राष्ट्र के रूप में है। प्राचीनकालीन भारतीय सभ्यता का स्पष्ट प्रमाण हमें वेदों, पुराणों व अनेक धाार्मिक ग्रन्थों में मिलता है। अनेक धार्मों की जन्मस्थली भारत

कला, संस्कृति, साहित्य से परिपूर्ण है। भारत में नगरीय सभ्यता का उदय ईसा पूर्व से माना गया है। हड़प्पा व मोहनजोदड़ो की खुदाई से प्राप्त साक्ष्यों ने यह प्रमाणित किया कि यह सभ्यतायें नगरीय सभ्यता थी। इनकी नगर नियोजन की कला विकसित व व्यवस्थित थी, व इनके नगरीय नियोजन में सामाजिक, आर्थिक व राजनीतिक परिस्थितियों को धयान में रखा गया था।

भारत में मधयकालीन शहरों की प्रमुख विशेषता यह रही कि इस काल में कला व साहित्य को महत्वपूर्ण स्थान दिया गया। मुगलकाल की विकसित कला व साहित्य के स्पष्ट प्रमाण वर्तमान में देखे जा सकते हैं। मुगलकाल में किले, इबादतगाह आदि पर स्थापत्य कला का प्रभाव स्पष्ट रूप से परिलक्षित होता है। दिल्ली कई मुगल राजाओं की राजधाानी रही, अत: इसका विकास अत्यधािक तीव्र गति से हुआ। इसी प्रकार भारत के अन्य शहर भी सुनियोजित ढंग से बसाये गये। भारत में शहरों के विकास की परम्परा में आर्थिक, राजनीतिक व धाार्मिक कारकों का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। 19वीं शताब्दी में ब्रिटिश शासन के प्रभाव से भारतीय नगरीकरण के दौर में तीव्रता आई। नये कल-कारखानों, उद्योगों व शैक्षिक संस्थानों का निर्माण हुआ, जनसंख्या में वृद्धि हुई व गाँवों में कृषि की दशा दिन-प्रतिदिन दयनीय होती गयी, यह एक प्रमुख कारण था जब लोग गाँव से विस्थापित होने लगे व शहरों की तरु आकर्षित हुए और शहरों की जनसंख्या में दिन-प्रतिदिन वृद्धि होती गई। ब्रिटिशकाल में जनसंख्या वृद्धि व नगरीकरण के अनियोजित दौर के कारण शहरों में अनेक प्रकार की समस्या उत्पन्न हुई।

LMI 2385 RC Applied

राजा बाबू गुप्ता
शोधा छात्र, समाजशास्त्र विभाग, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी

शहरीकरण का भारतीय गाँवों पर बढ़ता प्रभाव : एक समाजशास्त्रीय अधययन

ग्रामीण और शहरी क्षेत्र सामाजिक व वातावरणीय रूप से एक दूसरे पर अन्तर निर्भर होते हैं। इसलिए शहरों का गांवों पर प्रभाव पड़ना लाजमी है। यह प्रभाव सकारात्मक या नकारात्मक दोनों रूपों में हो सकता है। गावों तथा शहरों का लिंकेज कई दृष्टियों से जटिल तथा परिवर्तनशील है। आज के भारतीय गांव केवल खेती, पशुधान तथा प्राकृतिक परिदृश्य से गांव दिखते हैं। जबकि ग्रामीणों का जीवनस्तर व रहन-सहन शहरी हो चुका है। वैश्विक बाजारों ने गांवों में बाजारों की सम्भावनओं को देख परख लिया है। आजादी के समय जिन गांवों में सड़क, बिजली, पानी, स्वास्थ्य सुविधााओं की सम्भावना भी नही थी, वो गांव अब सड़को के माधयम से शहरी लिंकेज से जुड़कर अपार सम्भावनाओं का विस्तार कर रहे हैं। अत: देश के विकास के लिए सरकार को ग्रामीण-शहरी विकास के अन्त: सम्बन्धाों, स्थानीय प्राधीकरणों की क्षमता, निर्माणों इत्यादि को प्रोत्साहित करने हेतु सम्पूर्ण व संतुलित संसाधानों व प्रयासों के प्रति सजग रहना पड़ेगा। तब जाकर ग्रामीण-शहरी कड़ी विकास और उत्थान में सकारात्मक प्रभाव डाल सकती है।

LMI 2478 RC 2019
डॉ० राजेश कुमार सिन्हा
व्याख्याता, समाजशास्त्र विभाग, आर० एस० एस० महाविद्यालय, चोचहाँ, मुजफरपुर

ग्रामीण विकास योजनाएँ एवं अनुसूचित जातियों तथा कमजोर वर्गों में होने वाले परिवर्तन एवं विकास : एक समीक्षात्मक अधययन (मुजफरपुर जिला के संदर्भ में)

विकासशील देशों की श्रृंखला में भारत अग्रणी है। इस देश की लगभग 74.28 प्रतिशत जनसंख्या ग्रामीण है। इस देश की विशाल अर्थव्यवस्था में व्याप्त आर्थिक, सांस्कृतिक एवं राजनीतिक द्वैतवाद के परिणामस्वरूप ग्रामीण क्षेत्रें का शोषण होता रहा है तथा आज भी यह प्रक्रम जारी है क्योंकि सम्पूर्ण विकास आज भी प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप से अभिजात वर्ग तक सीमित है। जन - सामान्य तथा समाज के पिछड़े एवं कमजोर वर्ग, अनु० जातियाँ विकास के विविधा संसाधानों से काफी दूर है। ग्रामीण समाज की स्थिति का जो यह परिदृश्य है, इसका मुख्य कारण यह है कि नियोजित परिवर्तन के लिए जिन प्रारूपों और दृष्टिकोणों को व्यवहार में कार्यान्वित किया गया है, मुख्यतया उनकी प्रकृति पश्चिमी समाजों के अनुरूप है और वे भारतीय सामाजिक - आर्थिक परिदृश्य के अनुरूप नहीं है। अत: ऐसे दृष्टिकोण के विकास की आवश्यकता है जो भारतीय या भारतीयजनों की आत्मा के अनुरूप हैं।

प्रजातांत्रिक विकेन्द्रीकरण व्यवस्था के अंतर्गत जो सामान्यत: ग्रामीण क्षेत्रें के संदर्भ में 'पंचायती राज' के नाम से जाना जाता है। समाज के कमजोर वर्ग कभी भी सामुदायिक विकास के लिए निर्णय निर्माण प्रक्रिया में सम्मिलित नहीं हो सके हैं, उन्हें आधाार स्तर पर योजना का एक अंग बनने का कानूनी अधिकार दिया गया है। विभिन्न वर्गों और निर्वाचन क्षेत्रें में अनुसूचित जाति, अनु० जनजाति, अन्य पिछड़े वर्गों और महिलाओं का इसके लिए कुछ सीटों का आरक्षण दिया गया है। इन सब के बावजूद भी समाज के कमजोर वर्गों के लोगों को इन योजनाओं एवं नीतियों का अपेक्षित लाभ नहीं प्राप्त हो रहा है। प्रस्तुत अधययन के प्रमुख उद्देश्य हैं- (1) ग्रामीण विकास योजनाओं का अनुसूचित जाति पर क्या प्रभाव पड़ा है (2) ग्रामीण विकास योजनाओं के बारे में अनुसूचित जातियों व कमजोर वर्गों को पता है या नहीं (3) अनुसूचित जातियों के लिए प्रारंभ किये गये योजनाओं का लाभ अनुसूचित जातियों को मिल रहा है या नहीं (4) अनुसूचित जातियाँ व कमजोर वर्ग अपने मिलने वाले अधिकारों को समझ पा रहीं हैं अथवा नहीं। प्रस्तुत अधययन बिहार राज्य के मुजफरपुर जिला के ग्रामीण क्षेत्रें को अधययन क्षेत्र के रूप में लिया गया है तथा अधययन क्षेत्र से 100 उत्तरदाताओं का चयन सुविधाजनक निदर्शन प)ति से किया गया है। अत: कहा जा सकता है कि ग्रामीण विकास योजनाओं का लाभ सभी जातियों व वर्गों के लोगों को मिला है जिसमें अनुसूचित जाति व कमजोर वर्ग भी सम्मिलित हैं तथा इन योजनाओं के परिणामस्वरूप अब इनमें भी विकास देखा जा रहा है।

LMI 3362 RC Applied

डॉ० रणवीर कुमार
पोस्ट डॉक्टरेट फैलो, समाजशास्त्र, बी० आर० अम्बेदकर बिहार विश्वविद्यालय, मुजफ्फरपुर

सामाजिक जीवन पर सोशल मीडिया का प्रभाव : एक समाजशास्त्रीय अधययन (उत्तर बिहार के संदर्भ में)

सोशल मीडिया की अवधाारणा और विलक्षणता काफी जटिल और बहु–आयामी है। भारत में सोशल मीडिया का सक्रियता से उपयोग करने वालों की संख्या काफी तेजी से बढ़ती जा रही है। यह हमारे दैनिक जीवन में गहराई से समाता जा रहा है। सोशल मीडिया को अब एक ऐसे मंच के रूप में देखा जा रहा है जिससे अनेक विकास कार्यक्रमों से लोगों को जोड़ा जा सकता है, उनसे अपने विचार प्राप्त किया जा सकते हैं, भ्रष्टाचार पर काबू पाया जा सकता है और लोगों को सशक्त बनाया जा सकता है। इसके साथ ही सोशल मीडिया का प्रभाव सामाजिक जीवन पर स्पष्ट रूप से दिखाई देने लगा है। सोशल मीडिया सामाजिक व्यवहार के अंदाज में भी बदलाव ला रहा है। प्रेम, मित्रता, परिवार, घनिष्ठता, भाषा और अभिव्यक्ति, सामाजिक सम्बन्धा तथा सामाजिक संस्थाओं पर इसके स्पष्ट प्रभाव देखने को मिल रहे हैं। क्लिक करने मात्र से हम किस प्रकार पलक झपकते चित्र, विडियो, संगीत, दस्तावेज और तमाम तरह की सूचनाओं का आदान–प्रदान करने लगे हैं, उससे अनेक नैतिक, अनैतिक और व्यावहारिक प्रश्न खड़े हो रहे हैं। आज बच्चे और नवयुवा फेसबुक, यू–ट्यूब, इंस्टाग्राम के अंधाधाधुंधा व अविवेकी उपयोग के खतरों से प्राय: अनभिज्ञ होते हैं। समाज का आज हरेक व्यक्ति सोशल मीडिया को बिना इसके सकारात्मक और नकारात्मक प्रभाव जाने जीवन के एक अंग के रूप में स्वीकार करने लगे हैं। प्रस्तुत समस्या का चुनाव इसी बात को धयान में रखकर किया जा रहा है कि सोशल मीडिया ने सामाजिक जीवन को किस प्रकार प्रभावित किया है।

अधययन का उद्देश्य है कि सोशल मीडिया सामाजिक नेटवर्किंग वेबसाइटों जैसे – फेसबुक, ट्विटर, लिंकर, यू–ट्यूब, माइस्पेस, साउंडक्लाउड और ऐसे ही अन्य साइटों पर इस्तेमालकर्ताओं को विचार–विमर्श, सृजन, सहयोग करने तथा टेक्स्ट, इमेज, औडियो और विडियो रूपों में जानकारी में हिस्सेदारी करने और उसे परिष्कृत करने की योग्यता और सुविधाा प्रदान करता है। यह सच है कि सोशल मीडिया ने ‘इंटरनेट का लोकतांत्रिकरण’ किया है और सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि इसके भाषण और अभिव्यक्ति की आजादी को संरक्षित किया है किन्तु इसके साथ ही यह भी उतना ही सही है कि इसने समाज में एक ऐसे राक्षस को भी जन्म दिया है जो आपराधािक गतिविधाियों के लिए घात लगाये रहते हैं। कई अफवाहें भी मोबाईल फोन के जरिये सामाजिक नेटवर्किंग साइटों एवं मैंसेजिंग के जरिये फैलायी जा रही है जिससे न केवल सामाजिक सम्बन्धाों पर इसका असर पड़ा है बल्कि सामाजिक संरचना पर भी इसके प्रभाव पड़े हैं। इस अधययन का मुख्य उद्देश्य सोशल मीडिया का सामाजिक जीवन पर पड़ने वाले प्रभावों की जानकारी प्राप्त करना है, साथ ही इसने महिलाओं, युवाओं,

सामाजिक सम्बन्धों, सामाजिक संरचना तथा सामाजिक संस्थाओं को किस प्रकार प्रभावित किया है, यह जानना भी इस अधययन का मुख्य उद्देश्य है। प्रस्तुत अधययन के लिए उत्तर बिहार को अधययन क्षेत्र के लिए चयनित किया गया है। उत्तर बिहार के मुजफरपुर, सीतामढ़ी तथा पूर्वी चम्पारण जिला को अधययन क्षेत्र के रूप में लिया गया है तथा अधययन क्षेत्र से 100 उत्तरदाताओं का चयन उद्देश्यपूर्ण निदर्शन पति से किया गया है तथा अधययन विषय से सम्बन्धित तथ्यों का संकलन किया गया है।

DR0110223

रीतु त्रिपाठी,
समाजशास्त्र विभाग, बनारस हिन्दु विश्वविद्यालय, वाराणसी, उ. प्र.

डिजिटलाइजेशन का धर्म पर प्रभाव- एक समाजशास्त्रीय विश्लेषण

डिजिटाइजेशन एक वृहद् अवधारणा है जिसमें सूचना प्रक्रिया व उसके प्रबन्धा संबंधी सभी पहलू शामिल है। कम्प्यूटर, हार्डवेयर, साटवेयर, इंटरनेट, दूरसंचार प्रणाली इसका आधार है और जब इसे समाज द्वारा आत्मसात किया जाता है तो वह प्रक्रिया डिजिटलाइजेशन कहलाती है। परिणामस्वरूप दैनिक कार्यप्रणाली व सम्पूर्ण जीवन में क्रान्तिकारी परिवर्तन आया है। ऐसे ही परिवर्तनों में एक परिवर्तन धार्म के क्षेत्र में हुआ जिसे धार्मनिरपेक्षीकरण प्रक्रिया के रूप में भी माना जाता है। 1950 से आरम्भ डिजिटलाइजेशन के परिणामस्वरूप धार्मिक विश्वास, मूल्य, कर्मकाण्डों, विचार आदि में उल्लेखनीय परिवर्तन आया हैं। चूंकि समाज के आधारभूत मूल्य, धार्म व नैतिकता से प्रभावित है इसलिए इस क्षेत्र में परिवर्तन मंदगति से लेकिन निरन्तर होता आ रहा है। आज समाज के विभिन्न अंगों का संचालन धार्मिक नियम-कानून नहीं बल्कि लौकिक व औपचारिक नियम कानूनों से हो रहा है। पूर्व में जो समाज कर्म के आधार पर वर्गीकृत था आज वह आर्थिक आधार पर जैसे- उच्च, मधयम व निम्न वर्ग में वर्गीकृत हो गया हैं। एक प्रकार से कहा जाय तो ऑगस्त काम्ट द्वारा बतायी विकास प्रक्रिया में आज हम धार्मिक, तात्विक स्तर में होते हुए प्रत्यक्षवादी स्तर पर पहु¡च चुके हैं। अब लोग दैनिक कर्मकाण्ड में कम समय देकर अपने को उत्पादक कार्यों में लगाते हैं। जहां मुस्लिम समुदाय प्रार्थना का समय व उसे श्रवण करने हेतु आज प्त्तंल जैसे डिजिटल ऐप्लीकेशन का प्रयोग करता है। वही इसाई Bible Gateway के द्वारा ऑनलाइन बाइबिल का पाठ करते है। आज मदुरई (तमिलनाडु) का मत्स्यपालक अपने व्यवसाय पर निकलने से पहले सुरक्षित जीवन की आशा में घण्टों प्रार्थना न कर इंटरनेट पर मौसमपूर्वानुमानों व सुनामी चेतावनी की जानकारी लेता है। पवित्र धार्मिक ग्रन्थ हो या धार्मिक कहानियां, मंत्र हो या पूजा विधि सबकी उपलब्धा को सर्वसुलभ डिजिटलाइजेशन ने किया है। इस प्रकार जिजिटल तकनीक ने जहां एक ओर लोगों के आस्था विश्वास, कर्मकाण्ड पूजा पाठ आदि के तरीकों में परिवर्तन किया है वही अंधाविश्वास व रूढ़िवादिता का अन्त कर तार्किकता का समावेश भी किया है। अत: कहा जा सकता है कि डिजिटलाइजेशन ने वर्चुअल समाज में वर्चुअल धार्मिक समाज की उत्पत्ति को सम्भव बनाया है। इस प्रकार डिजिटलाइजेशन का धार्म पर प्रभाव : एक समाजशास्त्रीय विश्लेषण' पर केन्द्रित प्रस्तुत शोधा पत्र का उद्देश्य

डिजिटलाइजेशन की अवधारणा को स्पष्ट करते हुए भारतीय धाार्मिक समाज पर इसके पड़ने वाले प्रभावों व लाभों को इंगित करना है।

संकेतशब्द: डिजिटाइजेशन, डिजिटलाइजेशन, धाार्मिक प्रभाव, धर्मनिरपेक्षीकरण, प्रत्यक्षवाद, वर्चुअल समाज।

LMI-4054 RC 2018
संजय कुमार सोनकर
शोधा छात्र, समाजशास्त्र विभाग, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी

बेघर बच्चों की सामाजिक समस्याएँ

स्ट्रीट चिल्ड्रेन : इन बच्चों से तात्पर्य अपेक्षाकृत नाबालिग आयु (सामान्यत: 17 वर्ष तक) के उन बच्चों से है, जो गलियों, सड़कों, अस्पतालों, स्टेशनों, गंदे सार्वजनिक स्थलों आदि के आस–पास में बिना उद्देश्य के घूम–टहलकर अपना जीवन व्यतीत करते हैं तथा किन्हीं उपायों द्वारा जैसे- भीख मांगकर, चोरी करके, कूड़ा–कचड़ा चुनकर बोतल बेचकर आदि से अपना पेट पालने का कार्य करते हैं, जिनका कोई स्थायी निवास। सगे–सम्बन्धाी/परिवार होना आवश्यक नहीं है, इसके अन्तर्गत बाल श्रमिकों को भी रखा जाता है। नि:संदेह आज का बालक कल का युवा है और किसी भी राष्ट्र का धान उस राष्ट्र की युवा पीढ़ी होता है, जिसे राष्ट्र के निर्माण से अहम भूमिका निभाना पड़ता है, अत: यह एक विचारणीय प्रश्न है कि जब राष्ट्र की प्रगति इन बच्चों पर आश्रित है तो फिर क्यों इन बच्चों के भविष्य के साथ खिलवाड़ होता है।

LMI 2400 RC Applied
सुभाष कुमार
शोधा छात्र, समाजशास्त्र विभाग, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी।

ग्रामीण विकास एवं परिवर्तन में मनरेगा की भूमिका का समाजशास्त्रीय विश्लेषण

ग्रामीण विकास से तात्पर्य गांवों के सम्पूर्ण विकास से है जिसमें शिक्षा, आवास, स्वास्थ्य, रोजगार के पर्याप्त साधान एवं अवसर उपलब्धा कराने से है। ग्रामीण विकास के लिए प्रतिब) लोकतांत्रिक सरकार के द्वारा योजनाओं का संचालन किया गया, परन्तु कुछ खास सफलता नहीं प्राप्त हुई। जिसको धयान में रखते हुए केन्द्र सरकार द्वारा राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी कानून 2 फरवरी 2006 को देश के 200 अति पिछड़े जनपदों में समानान्तर चलाया गया। बाद में यह योजना सम्पूर्ण भारत में लागू कर दी गई जिसे 2009 के पश्चात मनरेगा नाम से जाना जाता है। मनरेगा का उद्देश्य, प्रत्येक ग्रामीण परिवार जिनके वयस्क सदस्य अकुशल शारीरिक श्रम करना चाहते हैं, उन्हें एक वर्ष में कम से कम 100 दिनों का रोजगार उपलब्धा कराते हुए आजीविका सुरक्षा को बढ़ाना

है। जिसका उल्लेख शोधार्थी द्वारा प्रस्तुत शोधा पत्र में किया जायेगा। जिसमें ग्रामीण विकास में मनरेगा की भूमिका, स्वरूप और क्रियान्वयन को प्रयास किया जायेगा।

LMI Not Mentioned RC Applied

सुष्मिता कुमारी
शोधा छात्र, समाजशास्त्र विभाग, काशी हिन्दू विश्वविद्याल, वाराणसी, उत्तरप्रदेश

समाजिक परिवर्तन एवं ग्रामीण विकास

देश को आजाद हुए 68 वर्ष हो चुके हैं और स्वाधीनता के इन 68 वर्षों में देश कफी आगे निकल गया है महानगरों से लेकर गाँवों तक में स्थितियां कफी बदली हैं। गाँव पहले से ज्यादा समृ) हुए हैं और ग्रामीण ज्यादा जागरूक हुआ है। यह कहना अतिशयोक्ति नही होगी कि आज देश में जो सामाजिक बदलाव दिख रहा हैं उसकी पटकथा का बड़ा हिस्सा ग्रामीण आंचलों को भी जाता है। हम यदि आज से सौ वर्ष पहले की स्थिति को स्मरण करें तो धयान में आता है कि समाज में छूआ-छूत अशिक्षा लड़किओं के प्रति भेदभाव जैसी अनेक बुराईयां व्याप्त थी बाल विवाह और उसके कारण विधावाओं की समस्या, दहेज प्रथा और उसके कारण बहुओं को जलाया जाना, बधुआ मजदूरी आदि अनेक सामाजिक रूढ़िया समाज का अभिशाप बनी हुई थी संविधाान की प्रस्तावना और अनेक कानूनी प्रावधानों के द्वारा कुप्रथाओं को दूर करने का प्रयास किया गया और धाीरे-धाीरे इन्हें पूरी तरह से तो नही मिटाया जा सका लेकिन इन पर कफी हद तक काबू पाया गया है। वैसे तो आज भी छूआ-छूत, दहेज प्रथा, बाल विवाह आदि की खबरें सुनने को मिल जाती है। लेकिन इनकी व्यापकता कफी कम है और कानून की डर से ऐसी घटनाऐं सामने कम आती है।

LMI Not Mentioned RC Applied

विजय कुमार गुप्ता
शोध छात्र समाजशास्त्र विभाग, बी0एच0यू0 वाराणसी

सूचना प्रौद्योगिकी मीडिया और ग्रामीण विकास

देश के सर्वांगीण विकास के लिए ग्रामीण विकास अतिआवश्यक है। ग्रामीण विकास की सकंल्पना ग्रामीण क्षेत्रें के सम्पूर्ण विकास से जुड़ी है, ताकि ग्रामीण लोगों के जीवन की गुणवत्ता में सुधाार लाया जा सके। भारत एक ऐसा देश है, जहाँ की लगभग 68 ीसदी जनसंख्या ग्रामीण क्षेत्र में निवास करती है। पिछले एक दशक में भारत में सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी ने तेजी से वृद्धि की है। जून 2015 में भारत लगभग 35 करोड़ इन्टरनेट प्रयोगकर्ता थे, जो देश के पूरी आबादी के 30 ीसदी है। इस प्रयोगकर्ताओं में गौर करे तो ग्रामीण क्षेत्र में इन्टरनेट

प्रयोग करने वालो की सख्या लगभग 14 करोड़ थी। इन आँकड़ो में प्रति क्षण इजफा जारी है। सरकार की डिजिटल इण्डिया जैसी योजनाए ग्रामीण क्षेत्रें में इण्टरनेट की पहुँच को सुनिश्चित करने के लिए प्रतिव) है। सामाजिक एवं आर्थिक विकास में सूचना प्रौद्योगिकी और मीडिया की भूमिका काफी अहम है। नवाचारो के प्रोत्साहन एवं कृषि के आधुनिकी से लेकर फसल, सुरक्षा, जन धान, आधाार कार्ड ई बस्ता और जागरूकता के प्रचार–प्रसार से जुड़ी ग्रामीण विकास एवं ग्रामीणों की तमाम समस्याओं के समाधाान में सूचना प्रौद्योगिकी एवं मीडिया उपयोगी साबित हो रही है। प्रस्तुत शोधा प्रपत्र उ0 प्र0 वाराणसी जनपद के काशी विद्यापीठ विकास खण्ड के सीरगोवरधानपुर गाँव के अधययन पर आधाारित है। जो अन्वेषणात्मक सह वर्णनात्मक शोधा प्रारूप पर आधाारित है, प्रस्तुत शोधा प्रपत्र में सूचना संचार प्रौद्योगिक, मीडिया और ग्रामीण विकास के बीच सम्बन्धाों की समीक्षा, सूचना प्रौद्योगिकी के अभिलक्षणों, स्वरूपो का प्रस्तुतीकरण, उत्तरदाताओं का सूचना प्रौद्यौगिकी एवं मीडिया के प्रति उन्मेषो का विश्लेषण तथा ग्रामीण विकास में इनकी भूमिका जैसी उपरोक्त उद्देश्यो को विश्लेषित किया गया है। शोधा प्रपत्र के उद्देश्यो तक पहुँचने के लिए शोधा प्रश्नो का सहयोग लिया गया है। शोधा प्रपत्र प्राथमिक एवं द्वितीयक तथ्यो के आँकड़ो पर आधाारित है।

मुख्य शब्द– सूचना प्रौद्योगिकी, ग्रामीण विकास, विकास, संचार माध्यम।

LMI Not Mentioned RC 2016

डा0 विकास कुमार,
पोस्ट डाक्टोरल फ्रेलो, समाजशास्त्र विभाग, काशी हिन्दु विश्वविद्यालय, वाराणसी

राष्ट्र निर्माण में हँासिये पर रह रहे वर्गो का योगदान

सामाजिक बहिष्करण और समावेशन के संर्पत्य की ऐतिहासिक जडे विर)ीकरण और स्तरीकरण की वैश्विक प्रक्रियाओं में है जो अतिप्राचिन समय से समाज में चली आ रही है। पूरे विश्व में मानवीय सभ्यता के विकास के फलस्वरूप जटिल और तीव्रतम समस्याओं के साथ इन प्रक्रियाओं की अभ्युदय हुआ, विशिष्टकरण प्राकृतिक वैज्ञानिकों के लिए चिंता का मुख्य विषय रहा है और जैविक विज्ञानों में इसका गहनतम अधययन किया गया, जबकि स्तरीकरण अर्थशास्त्रीयों, समाजशास्त्रीयों, मनोवैज्ञानिको और राजनीति वैज्ञानिकों के लिए अधययन का विषय रहा। सामाजिक स्तरीकरण का संर्पत्य सामाजिक वैज्ञानिकों के लिए आकर्षण का बिंदु रहा है। इन वैज्ञानिकों ने इस संर्पत्य का अधययन सामाजिक संरचना, सामाजिक प)ति और सामाजिक जीवन के विभिन्न आयामों जैसे समाज, संस्कृति, शिक्षा और प्रतिष्ठा के आलोक में किया है। सामाजिक स्तरीकरण की मुख्य समस्या तथाकथित लोकतांत्रिकृत और सभ्य समाज में खासकर सामाजिक, आर्थिक असमानताओं, शिक्षक का अभाव, आय और सभ्य समाज के लोकतांत्रि प्रक्रिया के सहभागिता के संबंधा में अधययन का विषयवस्तु रहा है,

तथ्य तो यह है कि सामाजिक बहिष्करण विमुखीकरण, अपबंचन और समाज में कुछ खास समूहों तथा समुदायों को मताधिकार से वंचित करने की क्रिया को इंगित करता है। किसी समुदाय के सामाजिक वर्ग और शैक्षिक स्तर को संकेत करता है और वस्तुत: ये समाज की गत्यात्मकता है जो किसी सामाजिक संगठन के मुख्य धाारा में व्यक्तियों को उसका हिस्सा बनाया रहता है। हो सकता है उनका निष्कर्ष डार्विन या हीगल के दर्शन से

लिया गया हो। इसका मतलब यह है कि सामाजिक बहिष्करण सामाजिक पहचान और मूल्यों से अपबंचना की ओर संकेत करता है। राजनीतिक क्षेत्र में इस पहचान का तात्पर्य नागरीकता को प्राप्त करने से है। आर्थिक क्षेत्र में इसका तात्पर्य आय की प्रचुरता से है, ताकि आनंद पूर्वक जिया जा सके। अभी भारत सामाजिक एकीकरण के संकट से जुझ रहा है, इस समस्या और गंभीर हो जाती है जब क्षेत्रिय नेता मौकापरस्ती का परिचय देते हैं, और जाति तथा जातिवाद की भावनाओं का इस्तेमाल करते हैं। उनकी राजनीतिक विचारधाारा, जातियता तथा नृजातीयता आधाारित है। क्षेत्रिय और राज्यों की राजनीति प्रतिशोधा तथा अस्थिरता की राजनीति से गहन तरीके से जुडी हुई है, जो अन्ततः राष्ट्रीय संकट बन जाती है। यह राष्ट्रीय अखंडता के लिए खतरनाक सि) हुआ। सहायता पहॅुचाने वाली नेटवर्क को कमजोर करने की प्रक्रिया को स्थायीत्व मिला है जिसका परिणाम अन्तर सांस्कृतिक कलहों मे होता है। अन्तराष्ट्रीय स्तर पर आतंकवाद का उदय सामाजिक अपवंचना का प्रत्यक्ष या परोक्ष परिणाम है।